प्रेम

‘आनन्दमय जन्मदिवस’ के लिए
गुरुमाई चिद्विलासानन्द द्वारा चुना गया एक सद्गुण

सिद्धयोग ध्यान-शिक्षक पॉल हॉकवुड द्वारा लिखित व्याख्या

प्रेम इतना सरल-सा भी हो सकता है जैसे अपने जीवनसाथी के लिए चाय बनाना और यह इतना गहन भी हो सकता है जैसे हर क्षण में भगवान के सर्वव्यापक हृदय की अनुभूति करना। सर्वोच्च भाव में प्रेम, भगवान का सर्वातीत, सर्वसमावेशक सार है, जो व्यापक और साधारण, दोनों ही रूपों में सृष्टि में सर्वत्र अभिव्यक्त होता है। प्रेम इतना शान्त व मृदुल प्रतीत हो सकता है, जैसे पत्ते पर से गिरने वाली बारिश की एक बूँद और इतना विशाल भी जैसे नक्षत्र। प्रेम अनन्तता का प्रकटरूप है।

वे कुछेक तरीक़े कौन-से हैं जिनसे हमें प्रेम की अनुभूति होती है और जिनके द्वारा हम एक सद्गुण के रूप में प्रेम का अभ्यास करें? संस्कृत में ऐसे अनेक शब्द हैं जो प्रेम या प्रीति के भाव को व्यक्त करते हैं, तथापि इसका भाव सर्वाधिक व्यापक रूप में जिस संस्कृत शब्द में समाविष्ट है वह है, ‘प्रेम’। यह स्नेह, उदारता, सहृदयता और करुणा के गुणों को व्यक्त करता है। अंग्रेज़ी भाषा में प्रेम के लिए प्रयुक्त शब्द, love [लव], गहन अनुराग, भक्ति और सराहना[१] के भावों से भी सम्बन्धित है। प्रेम के ये गुण उन तरीक़ों की ओर भी इंगित करते है जिनसे हम प्रेम को एक सद्गुण के रूप में अभिव्यक्त करते हैं : हम इस प्रकार बात कर सकते हैं और कार्य कर सकते हैं जिससे हमारे हृदय का प्रेम व्यक्त हो।

गहनतम स्तर पर, हमें प्रेम की अनुभूति अपने अन्तरतम स्वरूप के रूप में और समस्त सृष्टि के मूल स्वभाव के रूप में होती है। हमें भगवान की उपस्थिति की अनुभूति उस शुद्ध, सर्वव्यापक प्रेम के रूप में होती है जो हमारे अपने अन्तर में भी है और सम्पूर्ण सृष्टि में भी, और तब हमारा जीवन इस प्रेम की एक सजीव अभिव्यक्ति बन जाता है।

इस प्रकार के प्रेम की अनुभूति करने के लिए क्या करना होता है? श्रीगुरुमाई समझाती हैं कि ध्यान किस प्रकार एक साधक के अन्दर शुद्ध प्रेम की अनुभूति को जगाता है, उसका ज्ञान कराता है :

> जब तुम ध्यान के लिए बैठते हो तो हो सकता है कि शुरुआत में तुम सोचो, “यदि प्रेम हर जगह है तो मेरे लिए ध्यान करना क्यों ज़रूरी है?” तुम ध्यान करते हो, भक्ति को उन्मुक्त करने

> के लिए, तुम्हारी अपनी सत्ता में प्रेम मुक्त होकर बहे इसके लिए। यदि तुम अन्तर में इस प्रेम की अनुभूति नहीं करते तो फिर बाहर इसकी अनुभूति चाहे कितनी भी क्यों न करो, तुम सचमुच इसके मूल्य को नहीं समझ सकते। एक बार अनुभूति हो जाने पर तुम चाहे कहीं भी जाओ, तुम केवल वही देखते हो। तुम केवल वही अनुभव करते हो।[२]

जब आप अन्तर्मुख होते हैं तो आप उस प्रेम के प्रति अधिकाधिक जागरूक हो पाते हैं जो आपके अन्तर में सदैव विद्यमान है। आप यह पाते हैं कि स्नेह, विस्मय, तृप्ति और शान्ति की आपको होने वाली हर अनुभूति, इस अन्तर-प्रेम का ही प्रतिबिम्ब है। जब आप सन्तोष को अपने बाहर खोजना बन्द कर देते हैं, जब आप अपने ही अन्तर में विद्यमान प्रेम के विशाल आकाश में अधिकाधिक ध्यानपूर्वक प्रवेश करते जाते हैं तो आपको प्रेम की जो अनुभूति होती है, वह सब कुछ अपने में समा लेती है।

अपने ग्रन्थ 'भक्तिसूत्र' में देवर्षि नारद सर्वोच्च प्रेम को "परम प्रेम" कहते हैं; और वे कहते हैं कि यह "परम प्रेम" मूलतः अवर्णनीय है और समस्त विचार-प्रक्रिया [मानसिक क्रियाकलाप] व भाषाओं के परे है :

> अनिर्वचनीयं प्रेमस्वरूपम् ॥ ५१ ॥
>
> प्रेम के मूल स्वरूप को शब्दों में व्यक्त नहीं किया जा सकता।[३]

नारद जी कहते हैं कि परम प्रेम 'अनिर्वचनीयं' है—एक ऐसा सत्य जो शास्त्रों की सिखावनियों, परिभाषाओं, वाणी, शब्दों और ध्वनियों के परे है—एक ऐसा सत्य जो इतना शुद्ध और इतना गहन है कि मानसिक शक्तियाँ उसे समझ ही नहीं सकतीं। प्रेम, ईश्वर का अवर्णनीय, अथाह सत्त्व है और उसे केवल हृदय से ही जाना जा सकता है। चिन्तन करने के लिए कितनी अद्‌भुत सिखावनी! प्रेम के बारे में सोचने के बजाय, हम अन्तर में प्रेम की शब्दरहित, व्यापक उपस्थिति की खोज कर, अपनी ही सत्ता में प्रेम का प्रत्यक्ष अनुभव करने का अभ्यास कर सकते हैं।

हमारे मार्गदर्शन के लिए नारद जी 'स्वरूपम्' शब्द का भी प्रयोग करते हैं ताकि हम यह समझ सकें कि शुद्ध प्रेम हमारा सत्यतम स्वरूप है। संस्कृत शब्द 'रूपम्' किसी चीज़ के प्रकार या रूप का द्योतक है यानी उसके स्वभाव, विशेषताएँ, आकार और सौन्दर्य का; और 'स्व' शब्द दर्शाता है कि कोई चीज़ किसी की अपनी है। अतः 'प्रेमस्वरूपम्' का अर्थ है, 'परम प्रेम का मूल स्वभाव या स्वरूप।' 'भक्तिसूत्र' के सन्दर्भ में कहें तो, नारद जी हमें बारम्बार यह स्मरण कराते हैं कि ईश्वर 'प्रेमस्वरूपम्' हैं यानी परम प्रेम, ईश्वर का स्वरूप है और इसीलिए यह हमारा अपना स्वरूप है,

हमारा अपना सौन्दर्य, हमारा अपना रूप-आकार है जो सभी शब्दों और परिभाषाओं के परे है। हम परम प्रेम का मूर्तरूप हैं।

हमारा अन्तर-स्वरूप 'प्रेमस्वरूपम्' है, इस बोध को विकसित करने से प्रेम हमारा स्थायी अनुभव बन जाता है। जैसा कि गुरुमाई जी कहती हैं, अन्ततः हमें यह दिखने लगता है कि जो भी है, वह बस प्रेम है। हम 'हृदयम्' में, सभी के हृदय में जी रहे हैं। तब, हम कहीं भी जाएँ, हमें केवल प्रेम का ही अनुभव होता है। हम भगवान के प्रेम की पूर्ण दीप्ति की अनुभूति करते हैं और हमारा जीवन स्वतः ही उस प्रेम की एक अभिव्यक्ति के रूप में फलने-फूलने लगता है। प्रेम की अनुभूति करने के लिए, हमें प्रेम बनना होगा। प्रेम ही प्रेम को जान सकता है।

प्रेम के लिए अभिकथन

मैं 'प्रेमस्वरूपम्' हूँ।

[अभिकथन—वे कथन जिन्हें जागरूकता के साथ बार-बार दोहराया जाता है ताकि वे हमारी चेतना में पैठ जाएँ।]

---

[१] *Oxford English Dictionary,* s.v. "love," ९ मई, २०१६ को ऐक्सिस की गई, http://www.oed.com/view/Entry/110566

[२] गुरुमाई चिद्विलासानन्द, "Look Inside the Heart," दर्शन पत्रिका अंक ११९, *Love Begets Love,* पृष्ठ ४७।

[३] भक्तिसूत्र, ५१; विलियम के. महोनी, *Exquisite Love: Reflections on the spiritual life based on Narada's Bhakti Sutra* [डेविडसन, एन. सी. : सर्वभाव प्रैस, २०१४] पृष्ठ २६७।

©२०२० एस. वाय. डी. ए. फ़ाउन्डेशन®। सर्वाधिकार सुरक्षित।